चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय

डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में अभिव्यक्त समाज एवं उनका परिवेश :-

- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में आँचलिक परिवेश
- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में ग्रामीण परिवेश

- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में परिवेश की समस्याएं
- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में साम्प्रदायिक उन्माद एवं प्रभावित समाज
- डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में राजनीतिक स्वार्थ एवं प्रभावित समाज

डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में अभिव्यक्त समाज एवं उनका परिवेश :-

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । वह समाज में रहकर ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है । समाज से हटकर उसका जीवन नीरस है । समाज में रहकर ही मनुष्य प्रगति की ओर अग्रसर होता है । मनुष्य के एक-दूसरे के साथ सम्बन्ध स्थापित करने से जो समुदाय बनता है उसे समाज कहा जाता है । अतः समाज में रहते हुए अनेक क्रिया-कलाप, रीति-रिवाज, रहन-सहन आदि का मनुष्य अनुसरण करने के साथ-साथ वह मानवीय रूप से भी एक-दूसरे के साथ जुड़ा रहता है । इस दृष्टि से राही जी ने अपने समस्त उपन्यासों में विभिन्न समाजों का वास्तविक रूप से चित्रण किया है ।

डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों आँचलिक परिवेश :-

"आँचलिकता"

"हिन्दी शब्द सागर में अंचल का अर्थ साडो का छोर, पल्लू, अंचरा, किनारा, तट, घाटी या प्रदेश के रूप में लिया है ।" मानक हिन्दी कोश में सीमा के आस-पास, किसी क्षेत्र का कोई पार्श्व या सिरा क रूप में अंचल का अर्थ दिया है ।"0।

आँचलिक उपन्यास का हिन्दी में सर्वप्रथम सूत्रपात करने वाले लेखक फणीश्वरनाथ रेणु हैं । आँचलिक शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग रेणु जी ने ही किया ।

'मैला आँचल' फणीश्वरनाथ रेणु का सुप्रसिद्ध उपन्यास है । जिसके अन्तर्गत रेणु जी ने ग्राम्यांचल के परिवेश, रहन-सहन, मान्यताओं, परम्पराओं आदि का वास्तविक रूप में चित्रण किया है । रेणु जी ने अपने इस उपन्यास में ग्राम्य जीवन के अनके पहलुओं से परिचित कराया है । "कला की दृष्टि से रेणु का मैला आँचल हिन्दी का प्रथम आँचलिक उपन्यास माना जाता है । यह उपन्यास पूर्णिया ज़िले के विशेष भूभाग से संबंधित है । वहाँ के भाव, परंपरा, लोकविश्वास, राजनीतिक जागरण आदि सभी का इस उपन्यास में सफल अंकन हुआ है ।"02

डॉ० गोविन्द रजनीश के अनुसार - "मैला आंचल शब्द ही प्रतीकात्मक अभिप्राय लिए हुए है । जिसको पंत की सुप्रसिद्ध कविता से लिया गया है ।

'भारतमाता ग्रामवासिनी
खेतों में फैला श्यामल
धूल भरा मैला सा आँचल'"03

आँचलिक शब्द के लिये विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये हैं यथा - डॉ० शिव प्रसाद सिंह के अनुसार -"विशेष की कतिपय विशेषताओं के आधार पर वह अंचल आदि अंचलों से भिन्नता या अलगाव रखता है तभी उसे अंचल कहा जा सकता है और इस प्रकार के अंचल का चित्रण करने वाली रचना को ही आँचलिक की परिधि में समाविष्ट किया जा सकता है ।"04

डॉ० शशिभूषण सिंघल जी के अनुसार - "उपन्यास जब क्षेत्र विशेष से बंधकर स्थानिक रंगत से मुक्त जीवन प्रस्तुत करता है, तो उसे आँचलिक उपन्यास की संज्ञा प्राप्त होती है ।"05

उसी प्रकार आँचलिक उपन्यासकार डॉ० रामदरश मिश्र आँचलिकता की परिभाषा देते हुए लिखते हैं - "स्थिर स्थान पर गतिमान समय में जीते हुए अँचल के व्यीकतत्व के समग्र पहलुओं को उदघाटित करना । अँचल अपनी सम्पूर्ण विविधता और समग्रता के साथ नायक होता है ।"06

आँचलिक परिवेश के अन्तर्गत गाँव का जन-जीवन, धार्मिक किया-कलाप, रुढ़ि परम्पराएं, रीति-रिवाज, सभ्यता-संस्कृति, पंचायती राज, ज़मींदारी एवं यौन मनोवृत्ति

की मान्यताएं आदि का चित्रण होता है । राही जी ने इन सभी पहलुओं से हमें अपने उपन्यास आधा गाँव में विस्तृत रूप से परिचित कराया है । आँचलिक दृष्टि से आधा गाँव राही जी की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है । हिन्दी साहित्य जगत में आधा गाँव एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है । राही जी ने अपने उपन्यास आधा गाँव में स्वातंत्र्योत्तर तथा स्वातंत्रता के बाद की पस्थितियों से अवगत कराया है ।

आधा गाँव के अंचल विशेष की अभिव्यक्ति :-

राही जी आधा गाँव उपन्यास के आरम्भ "ऊँघता शहर" में हमें अपने गाँव गंगौली से परिचित कराते हैं - "गंगौली के दो कोनों पर सय्यद लोगों के मकान हैं कुल मिलकर दस घर होंगे । दक्खिनवाले घर दक्खिन-पट्टी कहलाते हैं और उत्तर वाले उत्तर-पट्टी । बीच में जुलाहों के घर हैं । सिब्लू दा के घर से राकियों की आबादी शुरु हो जाती है और फिर गंदी कच्ची गली गंगौली के बाजार में दाखिल हो जाती है और नीची दुकानों और खुजली के मारे हुए कुत्तों से दबकर गुजरती हुई नूरुद्दीन की समाधि के खुले हुए वातावरण में आकर इत्मिनान की साँस लेती है ।"07

आधा गाँव शिया मुसलमानों के जीवन पर लिखा गया प्रथम आँचलिक हिन्दी उपन्यास है । मोहर्रम का जैसा वर्णन आधा गाँव में है वैसा अन्य किसी हिन्दी उपन्यास में देखने को नहीं मिलता । राही जी ने बड़ी ही बारीकी और खूबसूरती के साथ मोहर्रम की दीवानगी का वर्णन किया है "ईद की खुशी अपनी जगह मगर मोहर्रम की खुशी भी कुछ कम नहीं हुआ करती थी बकरीद के बाद ही से मोहर्रम की तैयारी शुरु हो जाती दद्दा मरसिये गुनगुनाना शरु कर देती, अम्मा हम सबके लिये काले कपड़े सीने में लग जातीं और बाजी नौहों की बयाज़े निकाल कर नयी-नयी धुन की मश्क करने लगतीं और उन दिनों नौहों की धुनों पर फिल्मी म्यूज़िक का कब्ज़ा नहीं हुआ करता था ।"08

राही मासूम रज़ा ने शिया मुसलमानों के समाज का बड़ी ही गहराई से चित्राण किया है । मोहर्रम के हर एक पहलू को राही जी छूते हुए चले हैं । या हुसैन या

मोहम्मदी के नारे, सैदानियों का ग़ार-ग़ार रोना, बीबियों का चूढ़ी चढ़ाना फिर चाहे वो किसी भी उम्र की हो । "बीबियों ने चूढ़ियाँ चढ़ाईं । काली, गोरी और सांवली अधेड़, बूढ़ी और जवान कलाइयां नंगी हो गयीं बाजी ने अपनी नाक से नीम का तिनका निकाल कर टूटी हुई चूढ़ियों पर रख दिया ।"09

मोहर्रम के प्रति श्रद्धा गंगौली गाँव के केवल मुस्लिम समाज में ही नहीं अपितु हिन्दू समाज में भी दिखाई देती है । मोहर्रम के दिन दस तारीख को सारे ताजिये इकटठा करके कर्बला की ओर ले जाये जाते हैं उस वक्त भीड़ की भीड़ साथ में चल पड़ती है । उस समय सारे भेद-भाव मिट गये होते हैं । गाँव की सारी औरतें भी इसमें शामिल होती हैं किन्तु इन औरतों में सैदानियां नहीं होती क्योंकि वे हमेशा डोली में निकलती थीं । औरतें मन्नतें मानती हैं जो ताजिये के नीचे से निकल कर माँगी जाती हैं । इन ताजियों में कोई-कोई ताजिया इतना बड़ा होता है कि तंग गलियों में से निकल नहीं पाते इसके लिये उलतियां गिराना पड़ती हैं यदि उलती न गिरे तो हिन्दू समाज की औरतें इसे अपशगुन मानती हैं ।

"एक साल ऐसा हुआ कि एक बेवा ब्राह्मणी की उलती मजदूरों की भूल से जरा कम निकली हुई थी । बड़ा ताज़िया उसे गिराये बिना चला गया वह बेवा फूट-फूट कर रोने लगी कि इमाम साहिब उससे रुठ गये हैं इसलिये जरुर कोई मुसीबत आने वाली है । नहीं तो भला ऐसे कैसे हो सकता था कि बड़ा ताजिया उसकी उलती गिराये बिना चला जाता ।"10 इन दृश्यों से इन लोगों की मुहर्रम के प्रति अटूट श्रद्धा दिखाई देती है ।

गंगौली गाँव लेखक के लिये अजनबी नहीं है ये उनका अपना गाँव है । "यह मेरा शहर है मैं जब भी अपने शहर की गलियों से गुज़रता हूँ, यह मेरे कंधे पर हाथ रख देता है मेरी छोटी-बड़ी कहानियों के रास्ते पर मुझे जगह-जगह मिलता है ।"11 राही जी का कहना है कि इसकी कहानी न धार्मिक है न राजनीतिक । यह समय की कहानी है । "यह कहानी है समय ही की । यह गंगौली में गुज़रने वाले समय की कहानी है । कई बूढ़े मर गये, कई जवान बूढ़े हो गये, कई बच्चे जवान हो गये और कई बच्चे पैदा हो गये । यह उम्रों के इस हेर-फेर में फँसे हुए सपनों और हौसलों की कहानी है । यह कहानी है उन खँडहरों की, जहाँ कभी मकान थे और यह कहानी है उन मकानों की जो खँडहरों पर बनाये गये हैं ।"12

राही जी अपने गाँव के लोगो के प्रति अत्यन्त भावुक हैं और उतनी ही भावुकता एवं सटीकता के साथ वे अपने गाँव गंगौली को आधा गाँव में चित्रित करने में सफल हुए हैं । आधा गाँव के विषय में राही जी का कहना है - "यह गंगौली कोई काल्पनिक गाँव नहीं है और इस गाँव में जो घर नजर आयेंगे वे भी काल्पनिक नहीं हैं । मैंने तो केवल इतना किया है कि इन मकानों को मकान वालों से खाली करवाकर इस उपन्यास के पात्रों को बसा दिया है । ये पात्र ऐसे हैं कि इस वातावरण में अजनबी नहीं मालूम होंगे और शायद आप भी अनुभव करें कि फुन्नन मियाँ, अब्बू मियाँ, झंगाटिया बो, मौलवी बेदार, कोमिला, बबरमुआ, बलराम चमार, हकीम अली, कबीर, गया अहीर और अनवारुल हसन राकी और तमाम लोग भी गंगौली के रहने वाले हैं लेकिन मैंने इन काल्पनिक पात्रों में कुछ अपने पात्रों को भी फेंट दिया है । ये असली मेर घर वाले हैं जिनसे मैंने यथार्थ की पृष्ठभूमि बनायी है और जिनके कारण इस कहानी के पात्र भी मुझसे बेतकल्लुफ हो गये हैं ।"।3

गंगौली राही जी की जन्म भूमि रही है और अपनी जन्म भूमि के प्रति राही जी अत्यन्त भावुक हैं और वे बड़े गर्व से आधा गाँव की भूमिका में लिखते हैं- "मैं गंगौली का हूँ । मैं नील के उस गोदाम का हूँ जिसे गिलक्राइस्ट ने बनवाया था । मैं उस गढ़ई का हूँ जिसने गंगा की तरह गंगौली को अपनी गोद में ले रखा है । मैं पाँचवीं और आठवीं मोहर्रम की गश्त का हूँ । मैं करघों की उन आवाजों का हूँ जो दिन-रात चलते रहते हैं, कभी नहीं रुकते । मैं गया अहीर, हरिया बढ़ई और कोमिला चमार का हूँ ।"।4

देश विभाजन : अपनी मिट्टी का दर्द :-

देश विभाजन एक ऐतिहासिक घटना है । इस दौरान कितने घर उजड़े, कितने परिवार बिखर गये । माँ-बाप औलाद से दूर हो गये, भाई बहन से, मियां-बीवी से दूर रहकर विरह में जीवन बिताने को मजबूर हो गये । इस विभाजन ने दो मुल्कों को ही नहीं बल्कि रिश्तों को भी दो हिस्सों में बाँट दिया और ये बँटे हुए रिश्ते एकांत जीवन जीने को मजबूर हो गये जिन्होंने कभी यह नहीं सोचा था कि पाकिस्तान बनना इनकी जिन्दगी को नासूर बना देगा । हकीम साहब को यह समझ में ही नहीं आ रहा था कि पाकिस्तान

हिन्दू-मुसलमान को अलग करने के लिये बन रहा है या खून को खून से अलग करने के लिये । "ऐ बशीर ! ई पाकिस्तान त हिन्दू-मुसलमान को अलग करे को बना रहा बाकी हम त ई देख रहे मिया-बीवी, बाप-बेटा, भाई-बहिन को अलग कर रहा है कुद्दन हुआँ चले गये त ऊ मुसलमान है और हम हियाँ रह गये त का हम खुदा ना करे हिन्दू हो गये ।"15

पाकिस्तान निर्माण के समय भोली-भाली जनता को भड़काया गया हिन्दू-मुस्लिम का आपस में झगड़ा कराने के षडयंत्र रचे गये किन्तु इन गंगौली निवासियों का आपस में चाहे जितना भी मैल हो पर हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध हमेशा मजबूत रहे । पाकिस्तान बनने के पक्ष में काली शेरवानी ने बहुत तकरीरें की । प्यार से भी समझाया कि ये हिन्दू लोग मुसलमानों के दुश्मन हैं इसलिये पाकिस्तान बनने के पक्ष में आप लोग वोट दीजिये फिर आपका अपना मुल्क होगा । "हम ई सब ना मान सकते साहब" कम्मो ने तकरीर सुन लेने के बाद कहा; "हिंदुस्तान के आजाद होवे के बाद इ गयवा अहीर, इ छिकुरिया या लखना चमार या इ हरिया बढ़ई हमरे दुश्मन काहे को हो जइहे, यानी बिला वजहे ? हुआँ इहे सब पढ़ते हैं आप लोग ?"16

लेखक ने अपने उपन्यास आधा गाँव में विभाजन की पीड़ा से त्रस्त लोगों का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है । इस पीड़ा को राही ने दिल से अनुभव किया है । देश विभाजन का प्रभाव सम्पूर्ण गंगौली गाँव के निवासियों पर दिखाई देता है । राही जी ने विभाजनोत्तर उपजी मानसिक स्थिति को अत्यधिक महत्व दिया है । इसीलिये राही जी लिखते हैं - "इधर कुछ दिनों से गंगौली में गंगौली वालों की संख्या कम होती जा रही है और सुन्नियों, शीओं और हिन्दुओं की संख्या बढ़ती जा रही है ।"17

देश विभाजन एक दर्दनाक घटना है जिसने कुडन, घुटन और तन्हाई के सिवाय कुछ नहीं दिया । जहाँ नौजवान अपने बच्चों का भार बूढ़े माँ-बाप के कंधों पर छोड़कर चले गये । जिनकी बीवियां लगभग विधवाओं की जिन्दगी जी रहीं हैं । जो मानसिक तौर पर परेशान और झल्लाये हुए रहते हैं । सद्दन के पाकिस्तान चले जाने के बाद उसके छोटे-छोटे बच्चों और उसकी बीवी का भार हकीम साहब उठा रहे हैं । छः साल बाद सद्दन गाँव आता है और हकीम साहब से खैरियत पूछने पर हकीम साहब कहते हैं - "नाहीं बेटा, हम

बहुत खुश हैं । एक ठो बेटा रहा ... ऊ पाकिस्तान चला गया । एक ठौ जमींदारी रही, ऊको समझो कि पाकिस्तान चली गयी । अरे, जउन चीज हमरे पास ना है, ऊ पाकिस्ताने न गयी ? हमरे पास रह का गवा है ? एक ठो बेवा बेटी, तीन ठो यतीम नवासे-नवासी, एक ठो बहू और उहो बेवा ही है । तीन ठो पोते-पोती; उहो को यतीमे सकझो । कल एक ठो खज़ाना और मिल गया । सुखरमवा नालिश कर दिहिस है । अब हम ओका कर्जा कहाँ से दें ? दो-चार ठो मरीज आते रहे, तो कम्मो डागदरी शुरु कर दीहन । हमारी समझ में तो कुछ आता ना । नौ परानी का पेट कैसे चलायें ?"।8

वहीं दूसरी ओर फुस्सू मियाँ हैं जिनके सर पर सल्लो और उसके बच्चों का बोझ है । पाकिस्तान ने इन लोगों की ज़िन्दगी को जैसे दीमक लगा दी हो जो धीरे-धीरे इन लोगों की ज़िन्दगी को बुरादा किये जा रहा था । कहीं बच्चे अपने बाप को तरस रहे थे तो कहीं माँ-बाप अपनी औलाद को । बीवियाँ अपने शौहर की राह देख-देख कर झल्ला गयीं थीं और सोचतीं थीं कि आखिर ये पाकिस्तान क्या है जो वहाँ जाता है तो फिर वापस नहीं आता ।

यहाँ उत्पीड़न है, कुंठा है । यहाँ दिलों के जख्म बड़े गहरे हैं । फुन्नन मियाँ जो अपने दो जवान बेटे मुम्ताज और इम्तियाज़ की मौत को दिल में दबाये हुए जी रहे हैं जो अपनी बीवी कुलसूम से छुप-छुप कर उन्हें याद करके रो लेते हैं । समाज से बहिष्कृत किये जाने के बाद उनकी बेटी रज़िया की मौत पर कोई मुसलमान शरीक नहीं होता और उसकी नमाज उन्हें अकेले पढ़ना पड़ती है जो बहुत ही मार्मिक प्रतीत होता है ।

ज़मींदारी प्रथा :-

राही जी ने आधा गाँव में ज़मींदारी का भी खुलकर चित्रण किया है जिसका अपना एक रुआब है । इन ज़मींदारों की नज़र में इज्ज़त केवल जमींदार लोगों की होती है । "हमें पंचन से खाली एक ठौ बात पूछै खड़े भये हैं कि हमनों की कौनों इज्जत बाय कि ना बाय " पंच लोगों को यह बात मालूम थी कि "हमनों की कोई इज्जत ना बाय ।" इज्जत तो सिर्फ जमींदार की होती है और वह माई बाप होता है ।"।9

ज़मींदारी के दौरान ज़मींदारों के आम जनता पर होने वाले अत्याचार, लगान लेना, कर्ज का पैसा समय से न लौटाने पर सजा देना आदि परिस्थितयों से राही जी ने आधा गाँव में हमें अवगत कराया है, "साले अगर परसों तक लगान और कर्ज़ मय सूद के ना आ गया तो ढोर-डंगर सब नीलाम कर दूंगा और अपने इन लाट साहब को भी ले जा और इन्हें बतला कि जमींदारो से कैसे बात चीत की जाती है ।"20

इन सैयद जमींदारों को अपनी हडडी से बड़ा प्यार है । नीची जाति के साथ उठना-बैठना पसन्द नहीं करते और उन्हें गिरी नज़र से देखते हैं किन्तु फिर भी घरों में नीच जातियों की औरतें बीवियां बनी बैठी हैं । और दूसरी ओर ऐसे भी पात्र हैं जो एक दूसरे की शारीरिक भूख को सन्तुष्ट करते हैं । सितारा-अब्बास, सैफुनिया-हम्माद, बछनिया-सफिरवा, महरुनिया-फुस्सू, सुलैमान, अली हादी, वजीर इत्यादि सभी अपनी वासना को तृप्त करने में लगे हुए हैं । मौलवी बेदार बछनिया को देखते ही उसके दीवाने हो जाते हैं जबकि बछनिया सफिरवा के बच्चे की बिन ब्याही माँ बनने वाली है । और एक दिन भोर होते ही सफिरवा बछनिया को लेकर कलकत्ता भाग जाता है उस समय मौलवी बेदार पर घड़ों पानी फिर जाता है । यहाँ उम्र की सीमाएं नहीं देखी जातीं केवल दिलों का धड़कना और शरीर की भूख देखी जाती है तभी तो पचास साल के मौलवी बेदार अपनी पोती की उम्र की बछनिया को घर में लाने के लिये बेचैन हो जाते हैं । जब मौलवी बेदार इस बारे में हकीम साहब से बात करते हैं तो हकीम साहब कहते हैं " भई ऊ तो हरामी है ।"21

ज़मींदारी समाप्त हो जाने के बाद इन ज़मींदारों की जिन्दगी जैसे रुक सी गयी । ज़मीदारी खत्म होना इन लोगों के वजूद का खत्म होना था । "दूर-दूर तक फैले हुए बाग और खेत-इतनी बडी क़ायनात सिमटकर चंद कागजों में आ गयी काग़ज़ फिर काग़ज़ होता है ।"22

आर्थिक स्थिति कमज़ोर हो गयी । यह सैयद जमींदार अपना गाँव छोड़ कर पाकस्तिान जाना नहीं चाहते और गाँव में कोई छोटा काम करने में इन्हें शम आती है । ऐसे में मौलवी बेदार क्या करते ? उनका तो कोई सहारा नहीं था, पाकिस्तान जाने का इरादा कर लेते हैं इस पर फुन्नन मियाँ कहते हैं- "हम बाल-बच्चन वाले तो जा ना रहें, तेंह

जाये की कौन जरूरत पड़ गयी ? हियाँ मरिहों तो बाप दादा का पड़ोस मिलिहे और हुआँ मरिहो तो कौन जाने बगल में कौन ससुर की कबर होए ।"23

जमींदारी का खत्म होना, पाकिस्तान का निर्माण, नौजवानों का पाकिस्तान चले जाना इन घटनाओं से गंगौलीवासियों की सामाजिक और मानसिक स्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ा । एक ओर बेरोज़गारी बढ़ गयी तो दूसरी ओर लड़कियों के लिये लड़कों का जैसे अकाल सा पड़ गया । घर में जवान लड़कियाँ बैठी हुईं थी किन्तु ब्याह करें तो किससे ? अब सैयद घराने की शरीफ लड़कियों को सुन्नी, जुलाहे, राकी, आदि से तो ब्याह नहीं सकते । क्योंकि इनकी शुद्ध हडडी की झूठी शान जो इनके आड़े आती है । किन्तु एसी परिस्थिति में किया भी क्या जा सकता था ? सारी जिन्दगी तो लड़कियों को घर में बिठा नहीं सकते । अंततः शुद्ध हडडी दागी हडडी के लोगों में अपनी लड़की ब्याहने को तैयार हो गये । इस विषय में अब्बू मियाँ कहते हैं - " हडडी-उडडी जमींदारों का चोंचला रहा ।"24

बदलता परिवेश :-

देश विभाजन के बाद जहाँ गंगौली के अंचलवासियों के जीवन की गति मंद हुई है तो वहीं समय गतिमान हो गया है । राही जी ने ऊँघता शहर से लेकर नयी पुरानी रेखाएँ तक हमें दो युग से परिचित कराया है जहाँ एक युग की समाप्ति होती है तो दूसरा युग शुरु हो जाता है । विभाजन के पूर्व की स्थिति तथा विभाजन के बाद जो परिवर्तन आये इन सारी परिस्थितियों को राही जी ने आधा गाँव के माध्यम से यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है । अब गंगौली में कच्ची सड़कों की जगह पर खड़ंजे लग गये हैं । पंचायत ने गाँव में जगह-जगह पर मिटटी के तेल से जलने वाली लालटेनें लगवा दीं हैं । तो वहीं परिवर्तन की दृष्टि से लेखक ने मोहर्रम के समय का भी चित्तण किया है । मिंबर के सामने बैठने वाले लोग अब नहीं रहे उनकी जगह दूसरे लड़कों ने ले ली है । परुसराम जैसे छोटी जाति और गरीब लड़के का एम० एल० ए० बनना तथा हकीम साहब के लड़के कम्मो का होम्योपैथी का डा० बनना जो अब कम्मो नहीं डा० कमालुद्दीन के नाम से जाना जाता है । ये एक नये युग की ओर इंगित करता है ।

वहीं मौलवी बेदार पाकिस्तान चले गये और उनके ढहे हुये मकान पर परुसराम ने नया घर बना लिया है । एक बड़ा परिवर्तन इन अंचलवासियों की मानसिकता में भी दिखायी देता है । सईदा का अलीगढ़ पढ़ने जाना, उसका नौकरी करना हाँलाकि उस समय इस बात का बहुत बुरा माना गया पर अब कोई प्रश्न नहीं है । सैयद घराने के लोग अपनी लड़कियों का विवाह दागी हडडी वालों में करने को तैयार हैं । गाँव का गरीब लड़का परुसराम अब उसकी गिनती गाँव के धनवानों में होती है । उसके दरवाजे पर अब कुर्सियाँ लगती हैं जहाँ गाँव के बड़े-बड़े लोग आकर बैठते हैं । पर अब गंगौली में मोहर्रम उतनी दीवानगी और धूमधाम से नहीं मनाये जाते । उत्तर पटटी और दक्खिन पटटो में अब सन्नाटा है क्योंकि इस परिवर्तित समय का भार उठा पाने की क्षमता अब इन लोगों में नहीं रही ।

राही जी एक संवेदनशील लेखक रहे हैं । जीवन की जिन घटनाओं को उन्होंने समीप से देखा उसे बड़ी सच्चाई के साथ कलमबद्ध कर दिया । सत्य को कहने में राही जी सदैव निर्भीक रहे । आधा गाँव में यत्र-तत्र गालियों के प्रयोग पर आलोचकों ने उंगली उठायी और उसे भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के खिलाफ माना । इस विषय में राही जी का कहना है - "गालियाँ मुझे भी अच्छी नहीं लगतीं और मेरे घर में गाली की परम्परा नहीं है । परन्तु लोग सड़कों पर गालियाँ बकते हैं । पड़ोस से गालियों की आवाज आती है और मैं अपने कान बन्द नहीं करता यहीं आप करते होंगे । फिर यदि मेरे पात्र गालियाँ बकते हैं, तो आप मुझे क्यों दौडाते हैं ? वे पात्र अपने घरों में गालियाँ बक रहे हैं । वे न मेरे घर में हैं न आपके घर में । इसलिये साहब, साहित्य अकादमी के इनाम के लिये मैं अपने पात्रों की जबान नहीं काट सकता । इस उपन्यास के पात्र भी कहीं-कहीं गालियाँ बकते हैं । यदि आपने कभी गाली सुनी ही न हो तो आप यह उपन्यास न पढ़िये । मै आपको ब्लश करवाना नहीं चाहता ।"25 किन्तु यह कहना गलत न होगा कि यदि आधा गाँव से गालियाँ निकाल दी जायें तो इसकी रोचकता लुप्त नज़र आयेगी ।

भाषा-शैली एवं कथोपकथन की दृष्टि से राही जी आधा गाँव की आँचलिक विशेषता को बनाए रखने में सफल हुए हैं । जहाँ आँचलिक शब्द की यथार्थता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है । "समसामाजिक विषय पर लिखा गया तथा ऐतिहासिक महत्व रखने

वाला राही का आधा गाँव एक श्रेष्ठ आँचलिक कलाकृति है । अंचल विशेष की स्थानिक बोली, मुहावरे, लोकोक्तियां, लोकगीत, परंपराएँ, वेशभूषा आदि के प्रयोग से राही गंगौली के स्थान विशेष की भाषा के माध्यम से यथार्थ रूप में चित्रित किया करते हैं । जिसके प्रयोग से उन पात्रों की संवेदनाओं को तथा भावों को उसी शब्दों म समझा जा सके ।"26

आँचलिक भाषा :-

'आधा गाँव' में स्थानीय बोली, मुहावरों एवं लोकोक्तियों का सफल प्रयोग देखने को मिलता है । आँचलिक उपन्यासों में भाषा विशेष महत्व रखती है । आधा गाँव में पूर्वी उत्तर प्रदेश के मुस्लिम परिवार की पारिवारिक भाषा एवं जनभाषा भोजपुरी का प्रभाव दिखाई देता है । राही जी ने आधा गाँव उपन्यास अपनी जन्मभूमि गंगौली और गाज़ीपुर को केन्द्र में रखकर लिखा है । जो उत्तर प्रदेश में स्थित है । राही जी ने पात्रानुकूल भाषा का इस तरह प्रयोग किया है कि पात्र सजीव प्रतीत होते हैं । जब वाजिद मियाँ अपनी बीवी रहमान को मारना शुरु करते हैं तभी उनका बेटा कम्मो अपने बाप का हाथ पकड़ लेता है । वाजिद मियाँ जब हाथ नहीं छुड़ा सके तो गाली देने लगे -

"कोनो नयी गाली दयो ! हरामज़ादे त हम हियै हैं ।" कम्मो ने कहा, "बाकी़ अब जोत तूँ अम्माँ को कुछ कहियो तो खन के गाड़ देंगे ।" रहमान बो कम्मो से लिपट गयीं, "छोड़ माटीमिले ! का तैं बाप को मरबे ? तोरा जनाज़ा निकले । झाड़ूमारे ! दिमाग-दये ! अरे, मैं कहथियुँ, छोड़ जवानपीटे !"27

गंगौली गाँव के अनपढ़ पात्रों के माध्यम से राही जी ने भोजपुरी उर्दू में अपनी बात को समझाने का प्रयत्न किया है । संवाद की दृष्टि से राही जी एक सफल संवाददाता हैं । चाहें किसी भी तरह का संवाद हो लम्बा या छोटा राही जी उसे इस ढंग से कहलवाते हैं कि पाठक आकर्षित हुए बिना नहीं रह पाता । यथा :-

"तैं ग़ाजीपुर चल, हम तोके सलीमा दिखलायें"

"सलीमा ? सलीमा का ?"

"ई त हमहूँ का ना मालूम । बाक़ी सुना है कि तसवीरिया सब टायँ-टायँ बोलत हैंइ ।"

"नाहीं !" सैफ़ुनिया ने इन्कार कर दिया, "ल्यों, तसवीर कैसे बुलीहें ?"

"अल्ला क़सम, रे !" हमें भैया बताइन रहा, त हमहूँ ना माने रहें । बाक़ी मामू कहत रहे कि खुद ग़ाज़ीपुर में दू ठो सलीमा खुल गवा है ।"

"त ले चलकर दिखला दयो ।"

"त हम और कहत का रहे । तूँहो बिल्कुल पगली है का !" 28

लोक गीत आँचलिक उपन्यास की विशेषता है । राही जी इस विशेषता को बनाए रखने में सक्षम हुए हैं । आधा गाँव उपन्यास में अनेक प्रसंगों पर लोक गीतों का प्रयोग देखने मिलता है ।

यथा :-

"समधिन तोरा डोला चने खेत म
समधिन को पकड़ा बागन के बीच में
माली से अँखिया लड़ाये
बड़ी लौंडेबाज़
बड़ी गुँडेबाज़ !"29

आँचलिक उपन्यासों में पात्रों की संख्या अधिक होती है । आँचलिक उपन्यासों में एक के बाद एक घटना घटित होती है जिसके लिए अनेक पात्रों की आवश्यकता होती है । पात्रों के माध्यम से ही आँचलिक उपन्यासकार अपनी कल्पित कथा का निरूपण करने में सफल होता है । पात्रों की बहुलता होने पर भी प्रत्येक पात्र अपना अलग महत्व रखता है । यह एक अलग बात है कि एक हो पात्र अधिक समय तक टिका नहीं रह पाता । किन्तु प्रत्येक पात्र का एक विशिष्ट स्थान होता है । "अंचल की विविधता को रूप देने के लिए लेखक कभी इस कोण पर खड़ा होता है कभी उस कोण पर, कभी ऊँचाई पर, कभी नीचाई पर । उसमें अनेक पात्रों की आवश्यकता रहती है । हर पात्र की सत्ता का महत्व ह । इनमें से कोई पात्र एक-दूसरे के निमित्त नहीं होता, वे सब अंचल के निमित्त होते हैं ।"30

आधा गाँव उपन्यास में भी पात्रों की बहुलता दृष्टिगोचर होती है । यथा - फुन्नन मियाँ, अब्बू मियाँ, सुलेमान-चा, ठाकुर कुँवरपाल सिंह, अब्बू-दा, झंगटिया-बो, मौलवी बेदार, कोमिला, बबरमुआ, बलराम चमार, हकीम अली कबीर, गया अहीर, परुसरमवा, कम्मो, रहमान-बो, रब्बन बी, सईदा, तन्नू, सलमा, सदद्दन, जवाद मियाँ, हम्माद मियाँ, अनवारुल हसन आदि । पात्रों की अधिकता होते हुए भी इस उपन्यास का प्रत्येक पात्र अपनी आँचलिक विशेषता बनाए हुए है । आँचलिक उपन्यास के कुछ पात्र प्रमुख भूमिका के रूप में उपन्यास के आरम्भ से लेकर अंत तक बने रहते हैं । आधा गाँव उपन्यास में फुन्नन मियाँ का चरित्र प्रमुख है । जो उपन्यास के आदि से लेकर अंत तक अपनी विशिष्टता बनाये रखता है । "पूरे उपन्यास में फुन्नन का चरित्र अपने आप में विशिष्ट है यद्यपि आधा गाँव में चरित्रों की संख्या आवश्यकता से अधिक है फिर भी फुन्नन मियाँ का चरित्र दूसरे चरित्रों की अपेक्षा ज़्यादा मुखर एवं प्रभावशाली है । पाठकों के ऊपर यह चरित्र अपना प्रभाव छोड़ने में सफल है ।"3।

निष्कर्ष :-

'आधा गाँव' एक ऐसा उपन्यास है जो जीवन की सच्चाई से रु-ब-रु कराता है । सारांशतः आधा गाँव अपने भरे पूरे अर्थ में एक आँचलिक उपन्यास है जहाँ भारतीय संस्कृति की परम्पराएं हैं, ऐतिहासिक घटनाएं हैं । जीवन की उथल-पुथल के साथ अनेक परिस्थितियों से अवगत कराता हुआ ये आधा गाँव हमें विचलित कर देता है । राही जी ने जिस बेबाकी से इसकी प्रस्तुति की है वो हमारी आत्मा को झंझोड देती है । अंततः राही जी के मानवीय विचारों के साथ उनकी दूरदृष्टि तथा आस्थावादी दृष्टिकोण हमें आधा गाँव में परिलक्षित होते हैं ।

राही मासूम रज़ा ने गंगौली गाँव के समग्र चित्र को उसकी यथार्थता एवं विशेषताओं के साथ प्रस्तुत किया है । यहाँ जीवन के संघर्ष हैं, मानसिक तनाव हैं । यद्यपि उपन्यासकार ने अनेक झाँकियों को पाठक के समक्ष प्रस्तुत करते हुए ग्राम्यांचल की विशिष्टता एवं सजीवता को बनाये रखा है । राही जी गंगौलीवासियों के जीवन की उथल-पुथल एवं उनकी मानसिकता

को प्रस्तुत करने में अदभुत रहे हैं । अतः कहा जा सकता है कि आधा गाँव उपन्यास कलाकृति की दृष्टि से एक सशक्त आँचलिक उपन्यास है ।

राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में ग्रामीण परिवेश :-

भारत में गाँव की संख्या अधिक है अतः गाँव में भारत के प्राण बसते हैं । कोई भी साहित्यकार अथवा रचनाकार गाँव का यथार्थ रूप में चित्रण तभी कर सकता है जब उसने ग्रामीण परिवेश को प्रत्यक्ष रूप से जाना हो, उसमें जीवन जिया हो । ग्रामीण परिवेश में स्थानीय वातावरण, सभ्यता-संस्कृति, रीति रिवाज, रहन-सहन, खान-पान आदि का वर्णन एक संवेदनशील लेखक ही कर सकता है । इस दृष्टि से डॉ० राही मासूम रज़ा ग्रामीण परिवेश का चित्र प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं ।

लेखक उपन्यास के आरम्भ में ही गाँव का पुराना क़िला जहाँ पर सन्नाटा छाया रहता है । वहाँ पर लेखक कुछ इस तरह के वातावरण की कल्पना करता है - "यह असंभव नहीं कि अगर अब भी इस क़िले की पुरानी दीवार पर कोई आ बैठे और अपनी आँखे बंद कर ले तो उस पार के गाँव और मैदान और भेत घने जंगलों में बदल जायँ और तपोवन में ऋषियों की कुटियाँ दिखायी देने लगें । और वह देखे कि अयोध्या के दो राजकुमार कंधे से कमानें लटकाये तपोवन के पवित्र सन्नाटे को रक्षा कर रहे हैं ।"32

राही जी ने आधा गाँव उपन्यास के अन्तर्गत गंगौली गाँव का चित्रण बड़ी ही सूक्ष्मता के साथ किया ह । राही जी 'ऊँघता शहर' में अपने गाँव के विषय में लिखते हैं "गाँव के आस-पास झोंपड़ों के कई 'पुरे' आबाद हैं । किसी में चमार रहते हैं, किसी में भर और किसी में अहीर । गंगौली में तीन बड़े दरवाज़े हैं । एक उत्तर - पटटी में है और पक्कड़ तले कहा जाता है । यह लकड़ी का एक बड़ा - सा फाटक है । सामने ही पक्कड़ का एक पेड़ है । चौखट से उतर कर दाहिनीं तरफ़ कई इमाम चौक हैं जिन पर नौ मुहर्रम लकड़ी के खूबसूरत ताज़िये रक्खे जाते हैं और फिर एक बड़ा आँगन हैं । तो एक बड़ा फाटक उत्तर-पटटी में भी है और दो दक्षिण पटटी में एक ज़हीर-चा के पुरखों का, यानी दद्दा के मायके

वालों का । इस फाटक का नाम 'बड़का' फाटक है । और बड़ा दरवाज़ा अब्बू-दा के बुज़ुर्गों का है जो 'अब्बू मियाँ का फाटक' कहा जाता है ।"33

आधा गाँव ग्रामीण जीवन पर लिखा गया एक सशक्त उपन्यास है । आधा गाँव गंगौली गाँव के निवासियों की कथा है । हिन्दी उपन्यास जगत में शिया मुसलमानों के जन-जीवन पर लिखा गया प्रथम आँचलिक उपन्यास है । मुस्लिम जन-जीवन का राही जी ने बेहिचक एवं यथार्थ रूप में चित्रण किया है । राही जी ग्रामीण परिवेश के विभिन्न आयामों तथा इस परिवेश में जी रहे लोगों के जीवन को बड़ी ही गहराई से अनुभव करते चले गये हैं । क्योंकि राही जी की इस गाँव में आत्मा बसती है, यह राही जी का गाँव है । उनके अनुसार "यह गंगौली में गुज़रने वाले समय की कहानी है । कई बूढ़े मर गये, कई बच्चे जवान हो गये । यह उम्रों के इस हेर-फेर में फंसे हुए सपनों और हौसलों की कहानी है । यह कहानी है उन खण्डरों की जहाँ कभी मकान थे और कहानी है उन मकानों की जो खण्डहरों पर बनाये हुए हैं ।"34

प्राकृतिक सौन्दर्य में मनुष्य स्वयं को आनंदित अनुभव करता है । राही जी को अपने गाँव की प्राकृतिक सुष्मा से अत्यंत प्रेम है । आधा गाँव उपन्यास के अन्तर्गत राही जी ने प्रकृति की सुन्दरता का बखूबी वर्णन किया है -

"आकाश कार्तिक के आसमान की तरह धुला-धुला-सा था, और सितारों से यूँ पटा हुआ था जैसे चैत में महुए की सुगन्ध से धरती पट जाती है । ज़नाने इमाम बाड़े के आँगन में लगे हुए कदब की शाखें भी फूलों की अनगिनत गेंदे लिये मुस्करा रही थीं और हवा से चुहलें कर रही थीं, और कच्ची उम्र की सालियों की तरह बहनोई की राह देख रही थीं ।"35

इस गाँव के नदी-नालों, सड़कों आदि का चित्रण राही जी ने जिस प्रकार से किया है वह प्रत्यक्ष प्रतीत होता है - "नील के गोदाम से कटकर पोखरे से बचती हुई एक निहायत कच्ची सड़क गाँव की तरफ रेंग रही थी । उस चीज़ को सड़क कहना कहाँ तक ठीक है, यह मैं आज तक नहीं समझ सका हूँ । उस सड़क का तो यह हाल था कि एक गडढा खत्म होता था कि दूसरा शुरु हो जाता था । डाइवर गडढों से बचने की पूरी कोशिश कर रहा था । लारी कभी दाहिनी तरफ झुक जाती थी कभी बायीं तरफ ।"36

'आधा गाँव' उपन्यास में जब तन्नू छः वर्ष पश्चात मेजर बनकर गंगौली आता है तो गंगौली की हरियाली, खेत, पोखर, यहाँ की मिटटी की सोंधी-सोंधी सुगंध पाकर युद्ध का वातावरण भूल जाता है । "मगर जब उसे दूर से मस्जिद के खूबसूरत मीनार नज़र आने लगे, तो हवा यकायक गंगौली की तेज़ सुगंध से बोझिल हो गयी । वह यह बात भूल गया कि वह ज़ख्मों और चीखों के बियाबान में ज़िन्दगी के छः साल गुज़ार कर आ रहा है । मगर गन्ने और अरहर के हरे-भरे खेत देखकर वह ये तमाम बातें भूल गया । उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा इक्का झूल-झूल कर आगे बढ़ता रहा । घुँघरू बजते रहे और तन्नू शराब की तरह पुराने दिनों के घूँट पीता रहा । ठंडक बढ़ रही थी । सात का चाँद निकल चुका था और पोखर के टीलो पर कानाफूसी करते हुए आम, जामुन और पीपल के बूढ़े पेड़ दिखाई दे रहे थे । वह पल भर के लिये पोखर पर रुका हर तरफ सन्नाटा था । पोखर का पानी दम साधे हुए चाँद को टकटकी लगाये देख रहा था । उसने एक ढेला उठाकर छिछली फेंकी । पहला ढेला जहाँ का तहाँ डूब गया । उसने दूसरा फेंका और फिर तीसरा.... एक ढेला पानी पर सरकता हुआ पोखर पार कर गया ।"37

ग्रामीण समाज में त्यौहारों का अपना ही रंग होता है । यहाँ त्यौहार बड़ी ही उत्सुकता के साथ मनाये जाते हैं । आधा गाँव के गंगौली निवासी मुहर्रम बड़े ही धूम-धाम से मनाते हैं । पूरा साल मुहर्रम की तैयारी में ही निकल जाता है । ताजिया बनाना, नौहों की धुनें तैयार करना, काले कपड़े सिलना आदि । बोल मुहम्मदी तथा या हसैन के नारे पूरी गंगौली में गूँजने लगते है । ईद की खुशी अपनी तरफ किन्तु मुहर्रम की तो बात ही अलग थी । राही जी न मोहर्रम की गतिविधियों का बड़ी ही सूक्ष्मता के साथ वर्णन किया है । "बड़े अब्बा ने खुशबूदान में मसाला डाला । खुशबूदार धुआँ लहराकर उठा- ताँबे-चाँदी और गंगा-जमनी पंजों और गलते संगी, मखमल और पोथ के पटकों ने धुएँ की चादर से झाँकना शुरु किया । बीच में लकड़ी का एक खूबसूरत गोल गुंबदवाला ताज़िया था, जिस पर काला मखमल चढ़ा हुआ था । उसके चारों तरफ शीशे की रंगीन क़लमों की चादर बँधी हुई थी । तुरबत पर रक्खी हुई छोटी-छोटी सफेद पगड़ियों में जैसे जान पड़ गयी थी । अलमों और तुरबत

की पगड़ियों पर केले के पत्तों के तावीज़-जैसे टुकड़ों और कदइल के फूलों के सहरे चढ़े हुए थे ।"38

मोहर्रम आधा गाँव उपन्यास का आकर्षण का केन्द्र है । नौहों का पढ़ना शुरू होते ही औरतें रोना शुरू कर देतीं । रोने के लिये इमाम हुसैन का नाम ही काफी होता । "मैं कहना यह चाहता हूँ कि शिया औरतें मजलिसों में केवल इमाम हुसैन और उनके घर वालों की विपदा सुनने आतीं हैं । बस, इमाम हुसैन का नाम काफी हुआ करता था । "39 रब्बन-दा को इस बात का दुःख था कि वो एक ही आँख से रो पाती हैं "रब्बन दादी की एक आँख चेचक में चली गयी थी, इसलिये वह एक ही आँख से रोया करती थीं । उन्हें इस बात का बड़ा दुःख था कि सब दो आँखों से रोते हैं और वह एक ही आँख से रोने पर मजबूर हैं, चँनाचे वह हुसैन और उनके घर वालों पर रोते-रोते अपने दुःखों के बैन का दुखड़ा भी लगा दिया करतीं ।'अरे एक्के ठो अँखिया से कइसे रोयें, हे मौला'..... "40

मोहर्रम की दस तारीख को ताज़ियों का बड़ा भारी उर्स निकलता । सारे ताज़िये कर्बला की ओर ले जाये जाते । शिया मुसलमानों का मानना है कि इस दिन इमाम हुसैन हिन्दुस्तान आ जाते हैं । गाँव के सभी जाति एवं धर्म के लोग इस जुलूस में सम्मिलित होते । "बड़े ताज़िये के आगे-आगे अब्बू मियाँ कमर में पटका बाँधे, हाथ में चाँदी की मूठ वाली छड़ी लिये सोज़ख्वानी करते । फुन्नन मियाँ, बशीर मियाँ और हम्माद मियाँ उनके बाज़ू होते । ये लोग हर दो क़दम के बाद सलाम के दो शेर पढ़ते चलते । पीछे हज़ार-पाँच सौ आदमियों की भीड़ होती । औरतें बच्चों को बड़े ताज़िये के नीचे से निकालतीं । मन्नतें मानतीं । जारी पढ़तीं और शरबत पलिातीं । ये औरतें सैदानियाँ नहीं हुआ करतीं थीं । क्योंकि सैदानियाँ तो बिना डोली घर से निकल ही नहीं सकती थीं । ये तो गाँव की राकिनें, जुलाहिनें, अहारनें और चमाइनें होती थीं । बड़ा ताज़िया उनसे उनकी, मन्नतों और ज़ारी की दर्द भरी धुन से बेपरवाह किसी गजगामिनी या किसी सम्राट की आगे बढ़ता चला जाता । जुलूस इसी आन-बान से नूरुद्दीन शहीद के मज़ार तक जाता । फिर बड़ा ताज़िया लकड़ी के तमाम ताज़ियों के साथ वहीं से लौट आता और जुलूस कागज़ के ताज़ियों को लेकर खेतों के बीच से जानेवाली पगडंडी पर चलता हुआ कर्बला की तरफ़ चला जाता ।"41

मोहर्रम की अनेक गतिविधियों के साथ-साथ दुनियादारी की बातें, पारिवारिक गोष्ठी, शादी-ब्याह आदि के चक्कर भी चलाये जाते । फुन्नन मियाँ मजलिस में नौहा पढ़ने वाले नये युवक को देखते ही अपनी लड़की के लिये पसन्द कर लेते हैं । "जिस आदमी ने नौहा पढ़ा था, उसका नाम मोहम्मद हुसैन निकला । चावनपुर का रहने वाला था । कलकत्ता में कोई काम करता था । फुन्नन-दा ने फौरन ताड़ लिया । अस्ल में वह कुछ दिनों से परेशान रहने लगे थे । विलायत खाँ की बीवी से इश्क करना ठीक..... उन्हें अपने बच्चों की माँ बनाने में भी कोई नुकसान नहीं.....लेकिन लड़कियाँ होंगी तो जवान होंगी, और जवान होंगी तो उन्हें ब्याहना पड़ेगा ! बिरादरी में शादी होने का सवाल नहीं उठता, इसलिये उन्होंने वहाँ मजलिस के फर्श पर मोहम्मद हुसैन के बारे में अम्मू से बातचीत कर शुरू कर दी कि क्यों न राज़िया की शादी इस लड़के से कर दी जाये । अम्मू को भी यह रिश्ता पसंद आया, और मोहम्मद हुसैन फुन्नन-दा के मेहमान हो गये ।"42

मोहर्रम के बाद गंगौली में सन्नाटा हो जाता । हर जगह वीरान लगने लगती । "इमाम हुसैन हिंदुस्तान से करबला वापस चले जाते, तो इमाम बाड़े भाँय-भायँ करने लगते । इमाम चौक लकड़ी के खूबसूरत और सुबाक ताज़ियों के ठाठ को सीने से लगाये किसी अबला की तरह दुबककर बैठ जाते । और खुद ताज़ियों के वे चौखटे लावारिस मालूम होने लगते । इमाम बाड़े के मिंबर का गिलाफ़ उतर जाता । कमरे का फर्श उठा दिया जाता और उसकी जगह कमरे में चारपाइयाँ पड़ जातीं और वह एकदम से एक मामूली कमरा बन जाता ।"43

ग्रामीण समाज का कोई भी पहलू ऐसा नहीं है जो राही जी की दृष्टि से अनछुआ रह गया हो । उन्होंने संपूर्ण गंगौली गाँव के हर छोटे-बड़े पहलू का एकदम खुले रूप में चित्रण किया है । गाँव में कभी-कभी हवाई जहाज़ का दिख जाना एक अजूबा हो जाता । "लोहे की एक चील-सी दिखाई दी, जो पंख हिलाये बिना उड़ी चली जा रही थी । तमाम औरतें एक-दूसरे को हवाई जहाज़ दिखलाने लगीं । बच्चों ने आँगन में उछलना-कूदना शुरू कर दिया ! क़ैसर तो उसको दिखा-दिखाकर पेशाब करने लगा । सितारा और दिलआरा, जो उस वक़्त क़ैसर ही की तरफ देख रही थी, घबराकर शरमा गयीं । फिर हवाई जहाज़ एकदम

से आँगन पर आ गया तो कुछ परदे वाली बीवियों ने आँचल की ओट कर ली और कुछ 'उई' और 'माटी-मिली'कहती हुई गिरती-पड़ती दालान में भाग गयीं । इन बीवियों का ख़याल यह था कि हवाई जहाज़ वाले झाँकते ज़रूर होंगे ।"44

उसी प्रकार गंगौली निवासियों ने रेल का केवल नाम ही सुना था । स्टेशन गंगौली से कुछ दस मील दूर था । अधिकतर इन लोगों का सफ़र इक्कों पर होता था । "रेलगाड़ी पर सबसे पहले हकीम सय्यद अली कबीर ज़ैदी ने सफ़र किया । वह भी इसलिये कि एक साल गोरे मियाँ, उर्फ़ सय्यद इल्तिजा हुसैन आब्दी, ने उत्तर-पटटी के आठ गश्त पर यघह कहकर चोट की कि जुलूस तो लखनऊ में चुप ताज़िये का उठता है । इसलिये एक साल हम्मत करके वह निकल पड़े और उन्हें गाज़ीपुर से रेल में सफ़र करना पड़ा ।..... वह कई बरस तक रेल और उसके डिब्बों और इंजन की सीटी और गाड़ी की धड़धड़ाहट की बात करते रहे - और गाँव के लोग मुँह खोले उनकी बातें सुना किये ।"45.....

गाँव में शादी-ब्याह के अवसर पर औरतों द्वारा ढोल पर गाये जाने वाले गीत, नृत्य, संगीत आदि आकर्षण का केन्द्र होते हैं । ग्रामीण समाज में लोकगीतों का विशेष महत्व होता है । जो लोक संस्कृति के परिचायक हैं । विवाह आदि अवसर पर गाये जाने वाले गीत लोक संस्कृति की पहचान है । राही जी ने गंगौली गाँव के इन गीतों का वर्णन बड़ी ही सुन्दरता के साथ किया है :

"बड़ी धूम-गजर से आया री बना,
कुम्हार की गली हो आया री बना ।
अपनी अम्मा नचाता आया री बना,
सब लोग कहें कुम्हार का जना ।
बड़ी धूम-गजर से आया री बना ।
महतर की गली हो आया री बना ।
अपनी दादी नचाता आया री बना,
सब लोग कहें महतर का जना ।
बड़ी धूम गजर से आया री बना ।"46

उसी प्रकार .....

"कोठे से बड़ा लम्बा हमारा बना
बन्ने की अम्मा बाँस बरेली
बन्ने की अब्बा टेनी मुर्गा हमारा बना
कोठे से बड़ा लम्बा हमारा बना ।"47 इसके अतिरिक्त गाँव की औरतों द्वारा समधी-समधिन के लिये गालियाँ गाना, छेड़कानी करना आदि विवाह आदि प्रसंगो को और रंगीन बना देता है ।

यथाः-

"देखो तो समधिन आयीं हैं बड़े मज़ेदार-सी
आगे गड़हिया पीछे गामा का पुल.....
शरबत पीके हुई मतवाली, मूतेंगी छुल... छुल ... छुल...
समधिन तोरा डोला चने के खेत में
समधिन को पकड़ा बागन के बीच में
माली से अँखियाँ लड़ाये
बड़ी लौंडेबाज
बड़ी गुँडेबाज ! "48

ग्रामीण समाज चली आ रही मान्यताओं को महत्व देता है । विवाह के दिन गाँव में ज़ोरों से बारिश हुई । लड़कियाँ बदरून को छेड़ने लगीं । "हम कहत न रहे कि पतीली में मत खाओ । अब ई कीचड़ में मियाँ-भाई कहो गिर-गिरा गये तब ?"49

राही जी ग्रामीण परिवेश के अन्तर्गत मुशायरा, मुजरा आदि के द्वारा उत्तर भारत के लोक जीवन की झाँकी प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं । गाँव के ज़मींदार इन स्थानों पर जाना अपनी शान समझते हैं । "उन दिनों गुलाबी जान कोई चौदह-पंद्रह साल की

थी, और उसकी उतरी हुई नथ बिल्कुल ताज़ा थी । फुन्नन मियाँ इज़्ज़त की जगह, यानी दूल्हा के पास बैठे थे । पहले गुलाबी जान का मुजरा हुआ । गुलाबी जान मियाँ लोगों की महफिलों को जानती थी । दो-तीन पूरबी गीत गाने के बाद उसने ग़ालिब की एक ग़ज़ल छेड़ी । चंदा बाई गरदन टेढ़ी किये बैठी अपने दाहिने पैर से ताल देती रही । उनके पास बैठने वालों की आवाज़ों में वासना की नमी बढ़ती ही चली गयी । यहाँ तक कि गुलाबी जान ने यह महसूस किया कि वासना की इस बाढ़ में वह अपनी आवाज़ समेत डूब जाने वाली है ।"50

'आधा गाँव' उपन्यास में लेखक ने मुस्लिम संस्कृति का यथार्थ रूप में चित्रण किया है जिसके अन्तर्गत गाज़ीपुर एवं लखनऊ के नवाबों की नज़ाकत तथा सभ्यता-संस्कृति का परिचय मिलता है - "जब हुद्दन फुफ्फू खाना निकालने बैठतीं तो पहले फूफा की सेनी तैयार होती चीनी के नफ़ीस बर्तनों में कई तरह के सालन निकलते, छोटी-छोटी प्यालियों में कई तरह की चटनियाँ निकलतीं, अचार और मुरब्बा निकलता । एक प्याले में ओटा हुआ गाढ़ा गुलाबी दूध होता, जिस पर कोई तीन उगल मोटी मलाई होती ।"51

ग्रामीण समाज परम्परागत रूप से चली आ रही प्रथाओं का अनुसरण करता है । "पुल के पास ही एक बचे-खुचे पुल के मसाले के दो-तीन तूदे-से थे । बच्चों के दाँत निकलने के दिनों में आस-पास की माँएं उन्हें यही मसाला चटाती हैं, इसलिये धीरे-धीरे ये तूदे ख़त्म होते जा रहे हैं । यह मसाला मुग़लों के ज़माने से माँओं का हाथ बँटाता आ रहा है, गाज़ीपुर की माँओं की कई पीढ़ियाँ जानती हैं कि बौरी के पुल के पास मुग़लों ने मसाले के कई तूदे छोड़ रखे हैं, जो दाँत निकलले में बच्चों की मदद करते हैं ।"52

ज़मींदारी गाँव की विशेषता रही है । लेखक ने इस पहलू का वर्णन बड़ी ही वास्तविकता के साथ किया है । गाँव में बड़े धर्म अथवा जाति का होना और उसके बल पर छोटी जाति पर राज करना, उन्हें दबाव में रखना ये ज़मींदार लोग अपना अधिकार समझते हैं तथा उनका यह अधिकार पीढ़ी दर पीढ़ी बना रहता है । इन ज़मींदारों को क़लमी औलादों का शौक़ है । नीची जाति की औरतों के यह मुँह नहीं लगाते किन्तु फिर भी घरों में जुलाहिन, चमाइन अथवा अन्य छोटी जाति की औरतें डाल रखी हैं । ज़मींदारों के यह शौक उनके लटके-झटके कहे जाते हैं । "यह बात ताज्जुब खेज़ नहीं थी कि कोई सय्यद ज़ादा किसी

नाइन की लड़की से फँस गया है । यह तो ज़मींदारों के लटके-झटके हैं । सैदानियों में कुछ होता भी तो नहीं निरी बीवियाँ होती हैं ।"53

इसके अतिरिक्त गंगौली गाँव में मज़दूरों की स्थिति अत्यंत दयनीय है । झिंगुरिया, गया अहीर, कोमिला चमार आदि । इन लोगों ने अपना पूरा जीवन इन जमींदारों की गुलामीं में निकाल दिया और यह ज़मींदार इनसे सीधे मुँह बात तक नहीं करते । यह गुलामी परम्परागत रूप से चली आ रही है । यह ज़मींदार जीवन भर इन मज़दूरों से बिना पगार के काम कराते हैं और इन्हीं घरों में काम करते-करते इन मज़दूरों का जीवन समाप्त हो जाता है । किसान ग्रामीण समाज का एक महत्वपूर्ण व्यक्ति होता है । जिसके रहते इस समाज को अन्न आदि प्राप्त होता है । एक कृषक के जीवन में हल, बैल, खेती आदि का अत्यधिक महत्व होता है । आधा गाँव का मिग़दाद अपनी खेती-बाड़ी से बहुत प्रेम करता है । जब पाकिस्तान बनने की ख़बर फैल जाती है तब वह तन्नू को जो जवाब देता है उसमें उसका खेती के प्रति लगाव स्पष्ट रूप से झलकता है "हम ना जाएवाले हैं कहीं ! जायें ऊ लोग जिन्हें हल-बैल से शरम आती है । हम तो किसान हैं तन्नू भाई । जहाँ हमरा खेत, हमरी जमीन - तहाँ हम ।"54

गंगौली में पटटीदारी के झगड़े हैं, ईर्ष्या है । अपनी दुश्मनी में एक-दूसरे की लड़कियों को कोसना-पीटना भी चलता है । "अ तैं चुप रह ! जो हमरी लड़की का बुरा चहिये ओकी बुराई ओकी लड़की के सामने अैयहे ।" उन्होंने दोनों हाथ बददुआ के लिये बुलंद किये, "हे मौला मुश्किलकुशा ! हम आप पर भरोसा करके सबर कर रहें ।" बात शायद आगे न बढ़ती, लेकिन खिड़की खुली हुई थी और अब्बू मियाँ की बीवी पट के पीछे मौजूद थीं । रब्बन-बी ने जो बददुआ के लिये हाथ उठाया तो वह चमककर सामने आ गयीं, "अरे, हमरी लड़की को कोई का कहिहे ! जूती से ज़बनिया काट लेंगे । अब्बू मियाँ के बीवी ने तड़ से खिड़की बंद कर ली और जंज़ीर चढ़ा दी । ये खिड़कियाँ जो एक मकान को दूसरे मकान से मिलाती हैं, साल में दो-एक बार ज़रूर बंद हो जाती हैं और फिर कुछ दिनों बाद बिना बीच-बचाव के खुल जाती हैं । "55

गाँव में राजनीति की भी महत्व की भूमिका रहती है । राजनीति के बल पर गाँव के पंचायती लोग अशिक्षित भोली-भाली जनता के वोट पर नेता बन इसी जनता का बाद में शोषण करते है । निर्धनों एवं कृषकों को राजनीति के हथकंडों में फँसा कर, उन्हें भूमिहीन कर उन पर राज करते हैं । ग्रामीण जनता इन स्वार्थी लोगों की चालों से अंजान होने के कारण उनके जाल में फँस जाती है । इस प्रकार राजनीतिक दल अपनी शक्ति एवं अपनी प्रतिष्ठा को आधार बनाकर ग्रमीण जनता को लूटता है । पाकिस्तान निर्माण में वोट माँगने के लिये आये हुए लड़के गंगौली गाँव की जनता को अपने जाल में फँसाते हैं । ये भोले-भाले लोग उनकी बातों में आकर वोट देते हैं और परिणाम पाकिस्तान निर्माण । पाकिस्तान निर्माण गंगौली वासियों के लिये कभी न भूलने वाली घटना बन जाती है ।

राही जी को गाँव का जीवन बहुत प्रिय था । उन्हें गाँव की प्राकृतिक सुष्मा से बेहद लगाव था । उनका यह लगाव इन पंक्तियां में प्रतीत होता है :-

"नारियल के पेड़ों की छाँव बेचनेवालों,
बरगदों को मत काटो
पीपलों को मत छेड़ो
इमलियों को जीने दो
इनको पत्ती-पत्ती पर धूप सुखाती है
इनकी पत्ती-पत्ती पर
सुबह अपनी उंगली से
अपने नाम लिखती है . . . "56

राही जी ने गाँव को केन्द्र में रखकर गाँव में होने वाले अनेक उत्सवों, प्रसंगों आदि का बहुत ही सुन्दर ढंग से चित्रण किया है । गाँव की छोटी-छोटी खुशियाँ भी एक जश्न की तरह मनायी जाती हैं । नीम का पेड़ उपन्यास के अन्तर्गत जब अली ज़ामिन मियाँ बाइज़्ज़त बरी हो जाते हैं । तो गाँव मदरसा खुर्द में जश्न मनाया जाता है । यथा :-

"आस-पास के इलाके के सारे रईस आए थे उस दिन । सुलतान पुर से कलक्टर साहब, एस पी साहब और जज साहब आए थे ।

शहर से बिजली बनाने की एक मोटर भी आयी और फाटक बिजली के रंग-बिरंगे कुमकुमों की चादर ओढ़े मेहमानों का इस्तक़बाल कर रहा था । सारा गाँव रौशनी देखने गया था । बड़े-बूढ़े तो बातें कर रहे थे कि ऐसा जश्न तो ज़ामिन मियाँ की शादी में भी नहीं हुआ था । ''याकूत जान की आवाज़ की नज़ाकत को भूला जा सकता है भला -

तेरे आने की खुशी है ऐसी
हम तेरे जाने का ग़म भूल गये ।

बुधई के लिये तो वह रात और भी न भूलने वाली थी । उस दिन का खाना वह कैसे भूल सकता है ? बिजली में बैठकर खाना खाया था उस दिन बुधई ने । यही नहीं खुद मियाँ भी बैठे थे उसके पास कुर्सी खींचकर ज़िन्दगी में पहली बार शाही टुकड़ा खाया था बुधई ने । उस दिन तो मियाँ ने खुद इसरार करके सुखीराम के वास्ते शाही टुकड़ा और मुगगेर की टंगड़ी भिजवाई थी ।"57

डा० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में ग्रामीण परिवेश की समस्याएँ :-

ग्राम्य समाज शहरी समाज के बिल्कुल विपरीत होता है । जहाँ समाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा अनेक रूप से सहायता की आवश्यकता होती है । ग्रामीण परिवेश निरक्षर एवं अज्ञान होने के कारण अनेक परम्परागत रूढ़ियों से बँधा होता है । राही जी ने आधा गाँव के अन्तर्गत ग्रामीण परिवेश की अनेक समस्याओं का सम्पूर्ण वास्तविकता के साथ वर्णन किया है ।

अशिक्षा अंधविश्वास को जन्म देती है । आधा गाँव उपन्यास में प्रारम्भ से लेकर इसकी समाप्ति तक मुहर्रम का वर्णन दृष्टिगोचर होता है । ताजियों के प्रति श्रद्धा केवल मुसलमानों को ही नहीं, हिन्दुओं को भी है । ताजिया निकलते समय यहाँ हिन्दू औरतें मनौतियाँ मानती हैं । इसका एक उदाहरण वह ब्राह्मणी है जिसकी उलतियों का न गिरना वह अपशकुन मानती है । उसके बेटे की सज़ा का कारण भी वह इमाम साहब का नाराज़ होना मानती है । इसके अतिरिक्त मुस्लिम समाज भी अंधविश्वास से घिरा हुआ है । चेचक निकलने पर 'माता' आयीं हैं ऐसा उनका विश्वास है तथा उस समय उसके पास किसी और को नहीं

जाने दिया जाता है ।"मुम्ताज कहाँ है ? मैंने पूछा । माता निकल आयीं हैं बेटा । "दादी ने कहा ।"58 इसके अतिरिक्त धार्मिक अंधविश्वास के कारण ही "समीउद्दीन खाँ हिंदुओं का छुआ नहीं खाते थे और ठाकुर साहब मुसलमानों की छुई हुई किसी चीज़ को हाथ नहीं लगाते थे ।"59 हकीम अली कबीर का तो यह हाल था कि हिन्दू मरीज़ों को देखने के बाद बार-बार उन्हें हौज़ लेना पड़ता था ।

ग्रामीण समाज में अस्पृश्यता एवं जाति-व्यवस्था के भाव दृष्टिगोचर होते हैं । उच्च जाति वाले नीची जाति वालों के साथ उठ-बैठ नहीं सकते अतः उन्हें गिरी नज़र से देखा जाता है । परुसराम चमार एम० एल० ए० बन जाता है तो गाँव में इस बात का हल्ला हो जाता है कि अब इस चमार के आगे-पीछे घूमना पड़ेगा । मियाँ लोग का तो वजूद ही लरज़ उठा था । गाँव में तो इस बात का भी हंगामा हो गया था कि हम्माद और परुसराम में कुछ अनबन हो गयी है । "हुआ यह कि एक दिन परुसराम की बीवी हम्माद मियाँ के घर गयी और पलंग पर बैठ गयी कुबरा को इस चमारिन का यूँ बैठना बहुत बुरा लगा । उन्होंने सड़सड़ा दिया । उसने भी कुबरा को खरी-खरी सुना डाली । "अ-भ-ई तक आप लोगन का दिमाग ठीक न भया !" "अरे त कौन हमरे लोगन का दिमाग देखेवाली ?" कुबरा भी हत्थे से उखड़ गयी ; हमरे लोगन के ओट पर परसमुवा एमिल्ले हो गया है त तें इतराये लागीं । ढरे पें-पें करबे ते जूती से जबनिया तराश दीहों, माटीमिली ! खाहनपीटी ! तनि एका चढ़-चढ़ के बरब्बरे से बोला देखे कोई ! उतर मोरे से पलंग से । सारा बिछौना नजिस कर दिहिस, झाड़ूमारी ।"60 यहाँ कुबरा के व्यवहार में अस्पृश्यता की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देता है ।

परुसराम के कांग्रेस का नेता बन जाने के बाद हकीम साहब अपने घर की लकड़ी की कुर्सियाँ जला देने का हुक्म देते हैं । जिससे परशुराम अछूत जैसे नेता को इज़्ज़त न देना पड़े । "अब ई ज़माना आ गया है कि कमीने कुर्सी पर बइठे लगे । अरे लखना !" हकीम साहब ने आवाज़ दी, "कुरसिया सब भीतर पहुँचा दे रे । कह दे कि जला के खाना पका डालेंगे लोग । अब ईंहे होइहे । कमीने त बइठिहें कुर्सी पर, अउर अशरफ छिपय्यहें मुँह घर में ।"61 राही जी ने यहाँ हकीम साहब के पात्र द्वारा छुआछूत की समस्या का चित्रण किया है ।

इसके अतिरिक्त राही जी ने दलितों की शोषित स्थिति का भी यथार्थ रूप में चित्रण किया है । सुलेमान-चा का अपने घर में झंगटिया को डाल लेना इस बात की ओर इंगित करता है । यथा : "कहते हैं कि चमार चढ़ आये थे । और यह भी कहते हैं कि फुन्नन मियाँ ने बड़ी मुश्किल से समझा-बुझाकर और कुछ दे-दिलाकर वापस किया था । सुलैमान-चा का कहना था कि मामला पाँच-बीसी पर तय हुआ था, मगर गया अहीर का कहना था कि चमारों को सिर्फ तीन-बीसी मिले थे । बाकी के दो-बीसी फुन्नन मियाँ के काम आये थे ।"62

लेखक ने विधवा समस्या को भी अपने उपन्यास आधा गाँव में उभारा है । एक औरत का जीवन विधवा होने के बाद नीरस हो जाता है । यह समाज उसे हीन दृष्टि से देखता है । उसके सारे अधिकार छीन लिये जाते हैं । यहाँ तक कि उसे त्यौहार, शादी-ब्याह आदि प्रसंग से भी वंचित रखा जाता है । कोई भी कार्य उसकी उपस्थिति में अपशकुन माना जाता है । "उम्मुल हबीबा शादी-ब्याह के मौकों पर अछूत हो जाती थी । कंदूरी के फर्श पर उसकी परछाईं तक नहीं पड़ सकती थी । दुल्हन के कपड़ों को वह छू नहीं सकती थी । यहाँ तक कि दूसरों की शादी के गीत सुनते-सुनते उसके बाल कब्ल-अज़-वक्त सफेद हो गये थे । लेकिन जब हुसैन अली की पहली लड़की असगरी की कँदूरी का फश बिछा तो वह रो पड़ी और पहली बार भाभी की आवाज़ तेज़ हुई "ई त कउनो रोए का बक़त ना है, उम्मुल !" दरअसल उसे अब तक यह नहीं बताया था कि बेवा को क्या-क्या नहीं करना चाहिये । फिर धीरे-धीरे वह बेवगी की आदि हो गयी और उसे यह भी मालूम हो गया कि बेवा के फ़रायज़ क्या ह ।"63

राही जी एक ओर उम्मुल हबीबा द्वारा विधवा की कारुणिक स्थिति का चित्रण करते हैं तो दूसरी ओर उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन भी किया है । "बस एक बात के सिलसिले में उसका ज़ेहन साफ नहीं था । जब आँ-हज़रत ने पहली शादी एक राँड बेवा से की तो क्या यह अशरफ आँ-अशरफ से बड़े हैं कि बेवा से शादी नहीं करते । लेकिन वह यह सवाल करती किससे ?"64

गाँव में परिवार नियोजन की कोई व्यवस्था नहीं होती और यदि सरकार इसका आयोजन करती भी है तो रूढ़ि विचार इनके आड़े आते हैं । इनकी अज्ञानता आसानी से कुछ स्वीकारती भी नहीं । अन्ततः परिणाम यह होता है कि परिवार में आमदनी से अधिक बच्चे होते हैं । राही जी ने आधा गाँव में इस समस्या पर भी प्रकाश डाला है । "खैरुन के यहाँ ताबड़-तोड़ अठारह बच्चे पैदा हुए । सबसे छोटा बच्चा सवा साल का था और सबसे बड़ी बेटी छत्तीस बरस की और जो खुद माशाअल्लाह से आठ बच्चों की माँ थी । उसका बड़ा बेटा लगभग बाईस बरस का था ।"65

ग्रामीण समाज के संकुचित विचार कन्या के जन्म को अशुभ मानते हैं तथा पैदा करने वाली स्त्री की भी उलाहना की जाती है । पुत्री के पैदा होने का रोष स्त्री को भरना पड़ता है । पुत्र के जन्म को अधिक महत्व देना ग्रामीण समाज की यह एक बड़ी समस्या है । यह समस्याएँ हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों समाज में परिलक्षित होती हैं । फुस्सू मियाँ को सकीना से बहुत शिकायत थी कि वह एक लड़का नहीं जन पायी और लड़की पर लड़की पैदा किये जा रही थी । पुत्र की आशा मे प्रत्येक पुत्री के बाद वे गण्डा-ताबीज़ आदि में लग जाते किन्तु फिर भी मायूसी ही हाथ लगती । "इन्हें शिकायत यह थी कि सकीना के यहाँ ताबड़तोड़ सात लड़कियाँ पैदा हो चुकी थीं और फूस्सू मियाँ एक बेटे के अरमान में मरे जा रहे थे । जब बच्ची पैदा होती तो फुस्सू मन्नतें-वन्नते मानकर और गंडे-ताबीज़ में जकड़-जकड़ा कर फिर कोशिश में लग जाते । यहाँ तक सकीना को मतली होने लगती और वह कोरे बरतन में खाने लगती । ये दिन फुस्सू मियाँ बड़ी बेचैनी में गुज़ारते । यहाँ तक कि फिर लड़की हो जाती और फुस्सू मियाँ का मुँह लटक जाता और रब्बन बी हाथ उठा-उठा कर सकीना को कोसने लगतीं ।"66

वैश्या वृत्ति समाज के लिए एक अभिशाप है । वैश्या कोई भी स्त्री जन्मजात नहीं होती है । न ही वह यह कार्य अपनी इच्छा से करती है । सामाजिक समस्याएं तथा आर्थिक तनाव उसे यह घृणित कार्य करने के लिए बाध्य करता है । वैश्या समस्या आदि काल से ही समाज में व्याप्त है ।

डा० राही मासूम रज़ा वैश्या वृत्ति जैसी भयंकर समस्या की ओर भी पाठक का ध्यान आकृष्ट करते हैं । आधा गाँव के अन्तर्गत वैश्या प्रथा के रीति-रिवाजों का लेखक ने उल्लेख किया है । "जब गुलाबी जान ने नथ पहना और यह ख़बर खान साहब को इस दुमछल्ले के साथ मिली कि नसीराबाद के ठाकुर साहब गुलाबी जान का नथ उतारने का फैसला कर चुके हैं, तो खान साहब को ताव आ गया । बोले, "वह क्या गुलाबी जान नथ उतारेगा ! भाई साहब ने उसकी बड़ी बहन का नथ उतारा था, बाबा मरहूम ने उसकी खाला का नथ उतारा था, इसलिये गुलाबी जान का नथ मैं उतारूँगा ।"67 इनकी वैश्यावृत्ति के पीछे शौक नहीं इनके पेट पालने की मजबूरी है । उसी प्रकार गंगौली गाँव में ज़मींदारों का अपने घरों में रखैल रखना कोई बुरी बात नहीं मानी जाती, यद्यपि यह तो उनके लिये गर्व की बात है । प्रत्येक मुस्लिम जमींदार का घर में रखैल रखना उसका अधिकार माना जाता है और इनके यह अधिकार अवैध संतान जैसी समस्या को जन्म देते हैं । सैफुनिया, बछनिया आदि इसके उदाहरण हैं । बछनिया झंगटिया बो की अवैध संतान है तथा वह भी सफिरवा के बच्चे की कुँवारी माँ बनने वाली है इसलिये वह सफिरवा के साथ कलकत्ता भाग जाती है ।

इसके अतिरिक्त कम्मो उर्फ कमालुद्दीन भी अपने बाप की अवैध संतान है इसलिये वह अपने बाप से नफरत करता है "वह भी कोई बाप हुआ कि बेटा जिसका नाम बताने से शर्माये और जिसकी बीवी अब भी किसी और आदमी के नाम से पुकारी जाती हो ! कमालुद्दीन वल्द सय्यद जवाद हुसैन ज़ैदी-और माँ रहमान-बो ! क्या शजरा है ? मगर वह जानता था कि उसक पैदा होने पर उसका कोई इख्तियार नहीं था, इसीलिये उसके दिल में अपनी माँ-यानी रहमान की बीवी और जवाद मियाँ की रखैल के लिये भी कोई इज्ज़त नहीं थी ।"68

राही जी न झंगटिया, मेहरुनिया, सैफुनिया, बछनिया, कुलसूम, नईमा आदि स्त्री पात्रों की कारुणिक स्थिति का यथार्थ रूप में चित्रण किया है । जहाँ यह स्त्री पात्र नीची जाति होने के कारण जीवन भर समाज में वह स्थान प्राप्त नहीं कर पातीं जो सैदानियों का है । सामंत कुलीन वर्ग एवं ज़मींदार लोगों ने जीवन भर इनको अपनी रखैल का दर्जा दिया ।

दरिद्रता एक जटिल समस्या है । लेखक ने यहाँ आर्थिक परिस्थिति से जूझ रहे परिवारों तथा आर्थिक दृष्टि से उत्पन्न समस्याओं का चित्रण किया है । दरिद्रता के कारण एक ग़रीब जमींदार मुअम्मा हल करता है । हर महीने आशा करता है कि इस बार तो वह जरूर जीतेगा किन्तु निराशा ही प्राप्त होती है । उपन्यासकार ने इस वास्तविक स्थिति का चित्रण अपने उपन्यास में किया है । "अब्बू मियाँ घर जाकर सईदा की माँ के बुदबुदाने की परवाह न करते हुए शमा-मुअम्मा हल करन लगते और दुआ करने लगते कि बस एक बार मुअम्मे का इनाम मिल जाये, पर हर बार होता यह कि इनाम चार ग़लतियों तक बाँटा जाता तो उनके हल में पाँच ग़लतियाँ निकल आतीं । ..... फिर अगले मुअम्मे की तैयारी शुरू हो जाती, पर मुअम्मे के इन्तज़ार में ज़िन्दगी की ज़रूरतें तो रुक नहीं जातीं । ज़रूरतें मँहगी होती जा रहीं थीं । आमदनी ठप्प थी ।"69 उसी प्रकार से आर्थिक स्थिति से जूझती हुई रब्बन बी अपनी बहू सकीना को कोसती है "लड़की पे लड़की पैदा त किये जा रही हो - बाकी ई घर में रोकड़ ना धरा है ।"70 सकीना बी को इस बात की भी चिंता है कि लड़कियों का ब्याह कैसे होगा ? "हर चीज़ में तो आग लग गयी है । टाट का दुपट्टा ओढ़े-ओढ़े कंधा दुक्खे लगा । नज़र-न्याज़ को चीनी ना मिले । परसाल एक ठो मन्नत उतारे को रहा, त अलम पर चढ़ावे को कपड़ा ना मिला । का लड़किया को ईहे टाट का कपड़ा देके बिदा करिहें ।"71 आर्थिक विषमता ग्रामीण परिवेश की एक गम्भीर समस्या है ।

दरिद्रता इंसान को विवश बना देती है । वह पेट भरने के लिए कुछ भी करता है । यहाँ तक कि वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कर्ज़ भी लेता है । यह कर्ज़ किसी अभिशाप से कम नहीं होता । एक बार लिया तो इसका भुगतान पूरी पीढ़ी को भरना पड़ता है । पाकिस्तान विभाजन के पश्चात गंगौली गाँव में ज़मींदारी समाप्त हो जाती है । आधा गाँव उपन्यास के अन्तर्गत राही जी ने हकीम साहब की दरिद्रता का चित्रण कुछ इस प्रकार किया है । हकीम साहब अपने बेटे सद्दन को अपनी स्थिति बताते हुए कहते हैं - "नाहीं बेटा, हम बहुत खुश हैं । एक ठो बेटा रहा ... ऊ पाकिस्तान चला गया । एक ठो ज़मींदारी रही, ऊ को समझो कि पाकिस्तान चली गयी । अरे, जऊन चीज हमरे पास ना है, ऊ पाकिस्ताने न गयी ? हमरे पास रह का गवा है ? एक ठो बेवा बेटी, तीन ठो यतीम नवासे-नवासी, एक

ठो बहू उहो बेवा ही है । तीन ठो पोते-पोती उहो को यतीम समझो । कल एक ठो खज़ाना और मिल गया । सुखरमवा नालिश कर दिहिस है । अब हम ओका कर्ज़ा कहाँ से दे ? दो-चार ठो मरीज़ आते रहे, तो कम्मो डागदरी शुरु कर दीहन । हमारी समझ में तो कुछ आता ना । नौ परानी का पट कैसे चलायें ?"72

'आधा गाँव' के अन्तर्गत राही जी ने बेरोज़गारी की समस्या पर भी प्रकाश डाला है । गाज़ीपुर के नौजवानों के पास काम नहीं है । इसलिये नौकरी की तलाश में अधिकतर ये नौजवान अपने माँ-बाप तथा बीवी-बच्चों को छोड़कर कलकत्ता चले जाते हैं । गाँव में रोज़गार न होने के कारण आधे से अधिक जीवन तो उनका नौकरी की तलाश में ही व्यतीत हो जाता है । कलकत्ता गाज़ीपुर के लोगों के लिए एक विरह का नाम है । इस विषय में राही जी लिखते हैं - "कलकत्ता किसी शहर का नाम नहीं है । ग़ाज़ीपुर के बेटे-बेटियों के लिए यह भी विरह का एक नाम है । यह शब्द विरह की एक पूरी कहानी है, जिसमें न मालूम कितनी आँखों का काजल बहकर सूख चुका है । हर साल हज़ारों-हज़ारों परदेस जानेवाले मेघदूत द्वारा हज़ारों-हज़ारों संदेश भेजते हैं । शायद इसीलिए ग़ाज़ीपुर में टूटकर पानी बरसता है और बरसात में नयी-पुरानी दीवारों, मस्जिदों और मन्दिरों की छतों और स्कूलों की खिड़कियों के दरवाज़ों की दरार में विरह के अँखुए फूट आते हैं ।"73

निष्कर्ष :-

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि राही जी ने अपने उपन्यासों में ग्रामीण समाज का यथार्थ रूप में चित्रण किया है । जिसके अन्तर्गत ग्रामीण समाज की मानसिकता, उनके किया-कलाप, जीवन जीने की पद्धति आदि चित्रण हुआ है । इसके अतिरिक्त राही जी ने ग्रामीण समाज की विविध समस्याओं आदि से भी अवगत कराया है । तत्कालीन ग्रामीण समाज बेरोज़गारी एवं दरिद्रता के कारण अपना घर, अपना परिवार छोड़ने के लिए विवश हो गया । स्वतंत्रता के पश्चात ग्रामीण समाज में अनेक परिवर्तन हुए किन्तु इस समाज के लोगों के जीवन में कोई

ख़ास परिवर्तन नहीं हुआ । यद्यपि एकता की भावना खंडित होती नज़र आयी । शहरी प्रभाव के कारण गाँव की सभ्यता एवं संस्कृति तथा धार्मिक मान्यताओं एवं परंपराओं पर खासा परिवर्तन दृष्टिगोचर हुआ है । अंततः राही जी ग्रामीण समाज के प्रत्येक पहलू को कलमबद्ध करने में सफल हुए हैं । एक लेखक का दायित्व होता है कि वह अपने उपन्यास के माध्यम से उन तमाम सामाजिक समस्याओं आदि को समाज के सामने प्रस्तुत करे जो इस समाज में व्याप्त हैं जिससे यह समाज उन समस्याओं से अवगत हो उनको दूर करने का प्रयत्न करे । राही जी इस दायित्व को निभा पाने में सफल हुए हैं ।

संदर्भिका

1. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी के आँचलिक उपम्यासों में चित्रित दलित जीवन, डॉ० शम्भूनाथ रामचरण द्विवेदी पृ० 40
2. डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में व्यक्त जीवन-दर्शन, डॉ० सुनन्दा मग्गीवार पृ० 90
3. डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में व्यक्त जीवन-दर्शन, डॉ० सुनन्दा मग्गीवार पृ० 87
4. आँचलिक उपन्यासों में वर्ण एवं वर्ग संघर्ष, डॉ० अशोक धुलधुले पृ० 26
5. आँचलिक उपन्यासों में वर्ण एवं वर्ग संघर्ष, डॉ० अशोक धुलधुले पृ० 27
6. हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में पुरुष, डॉ० संध्या मेरिया पृ० 26
7. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 14
8. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 26
9. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 39
10. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 71
11. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 11
12. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा वही पृष्ठ
13. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 14
14. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 290
15. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 284
16. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 240

17. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 13
18. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 322
19. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 133
20. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 147
21. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 107
22. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 292
23. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 294
24. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 313
25. राही मासूम रज़ा : एक अध्ययन, डॉ० जिलेदार सिंह पृ० 128
26. डॉ० राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में व्यक्त जीवन-दर्शन पृ० 100
27. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 165
28. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 184
29. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 272
30. डॉ० रामदरश मिश्र के उपन्यास, डॉ० निदेश प्रसाद सिंह पृ० 25
31. राही मासूम रज़ा : एक अध्ययन, डॉ० जिलेदार सिंह पृ० 60
32. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 09
33. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 14
34. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 11
35. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 55
36. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 30
37. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 191
38. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 44
39. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा वही पृष्ठ
40. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 39
41. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 71
42. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 49
43. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 67
44. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 62
45. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 68
46. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 161

47. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 162
48. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 272
49. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 161
50. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 87
51. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 22
52. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 26
53. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 181
54. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 216
55. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 232
56. नीम का पेड़, डा० राही मासूम रज़ा पृ० 30
57. नीम का पेड़, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 28
58. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 31
59. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 79
60. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 335
61. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 267
62. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 41
63. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 118
64. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा वही पृष्ठ
65. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 102
66. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 109
67. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 88
68. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 236
69. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 326
70. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 110
71. नीम का पेड़, डॉ० राही मासूम रजा वही पृष्ठ
72. नीम का पेड़, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 322
73. आधा गाँव, डॉ० राही मासूम रज़ा पृ० 10